International Journal of Multidisciplinary Horizon

ISSN: **3049-2017**
IJMH 2025; 2(6): 112-116
© 2025 IJMH
www.themultijournal.com
Received: 01-12-2025
Accepted: 26-12-2025
Publish : 27-12-2025

सविता उदावत
व्याख्याता, एच.एच. महाराजा हनवंत-सिंह मैमोरियल कन्या महाविद्यालय, जोधपुर, राजस्थान

Correspondence:
सविता उदावत
व्याख्याता, एच.एच. महाराजा हनवंत-सिंह मैमोरियल कन्या महाविद्यालय, जोधपुर, राजस्थान

"प्रताप की वीरता और संघर्ष का प्रतीक" हल्दीघाटी (खमणोर)

सविता उदावत

हल्दीघाटी युद्ध व युद्ध स्थल का विशेष महत्व रहा है इसका नाम लेते ही हमारे मस्तिष्क में प्रताप की तेजस्वी मूर्ति उभर कर सामने आ जाती है। हल्दीघाटी की लड़ाई का वह ऐसा नायक है जो हार कर भी जीत गया और जीत कर अमर हो गया। उसका यश चारों और फैल गया। यों हल्दीघाटी की लड़ाई के साथ प्रताप का और प्रताप के साथ हल्दीघाटी का नाम जुड़ गया।[1]

हल्दीघाटी दो किलोमीटर लम्बे उस संकडे पहाडी दर्रे का नाम है जो बलीचा गांव से नीचे खमणोर की ओर उतरता है। यह पहाडी मार्ग उस समय इतना संकड़ा था कि उसमें दो-तीन व्यक्ति एक साथ नहीं चल सकते थे इस घाटी की मिट्टी हल्दी के समान रंग वाली होने के कारण हल्दीघाटी के नाम से जानी जाती है।[2] 18 जून 1576 ई. के दिन अकबर के सेनापति मानसिंह व महाराणा प्रताप के बीच हुए इस युद्ध को अधिकाशं राजस्थानी स्रोतों और अबुलफजलकृत अकबरनामें में इसे 'खमणोर का युद्ध' बताया गया है। फिर यह 'हल्दीघाटी का युद्ध' कैसे प्रसिद्ध हुआ? इस प्रसंग में इतना ही कहा जा सकता है कि 'अमरकाव्य' का युद्ध क्षेत्र संबंधी विवरण ही इसका मूल आधार बना है।

अमर काव्य का एक पद्य उद्धृत किया गया है उसमें कहा गया है "पर्वतों के मध्य स्थित 'हारिद्र घट्ट' (हल्दी घाटी) में प्रतापसिंह प्रविष्ट हुआ और वहां आए हुए मुगलों, कछवाहों और पठानों के साथ उसने युद्ध किया।"[3] जब इतिहासकार कर्नल जेम्स टाड द्वारा 1828 ई. में लंदन में राजस्थान का इतिहास 'अनाल्स एंड एंटीक्वीटीज ऑफ राजस्थान में प्रकाशित किया गया जिसमें इसे हल्दीघाटी का नाम देकर मेवाड की 'थर्मोपोल्लि' का अंलकरण दिया गया तत्पश्चात् सभी आधुनिक इतिहासकारों ने अपने ग्रन्थों में इसी नाम का प्रयोग किया है।[4]

घाटी का प्रारम्भ बलीचा ग्राम से चलने पर चेतक के चबूतरे से आगे कुछ कदम चल कर ही एक ऊँची पहाड़ी पर चढ़ने के साथ होता है, मार्ग पुनः नीचे उतरता है और पुनः चढ़ता है जहाँ हल्दीघाटी है, आगे उतरने पर 'बादशाही बाग' आता है। यह मैदान लगभग दो सौ मीटर लम्बा और उतना ही चौड़ा है। चारों ओर पहाड़ों से घिरा हुआ है। बाग से पूर्व में एक घाटी गयी हुई है जो इतनी चौड़ी है कि इसमें से 10-12 सवार ही आगे बढ़ सकते है। इसी मार्ग से आगे बढ़ने पर पुनः पहाड़ी पर चढ़ते हुए लगभग 2 किलोमीटर चलने पर घाटी का मुहाना आ जाता है अर्थात् यहां घाटी समाप्त हो जाती है (अथवा खमनोर की ओर से घाटी प्रारम्भ होती है) जहां घाटी समाप्त होती है, वहाँ खमणोर गांव की भागल (सीमावर्ती बस्ती) और वर्तमान में बस स्टेण्ड है।[5]

इस भांति लड़ाई का यह मैदान खमणोर गांव, बनास नदी और हल्दीघाटी की पहाड़ियों की तलहटी के मध्य आ गया है, जिसके लिए बदायुनी ने लिखा है 'जमीन बहुत ऊबड़-खबड, पथरीली और कंटीली झाडियों वाली थी। यह स्थल अब 'रक्तताल' के नाम से प्रसिद्ध है।[6]

'अमरकाव्य' और 'नैणसी' के कथन भी यही प्रमाणित करता है इसमें भी मुख्य युद्ध स्थान 'रक्तताल' नामक वह मैदानी क्षेत्र रहा, जो वर्तमान में पंचायत समिति के कार्यालय के ठीक पीछे स्थित है। उस समय (जून मास) में नदी का तल सूखा रेतीला रहा होगा। यहां, मैदानी स्थान के एक गर्त में युद्ध के दौरान बहा हुआ रक्त भर गया होगा या अधिकांश वीर इसी भाग में या इसके आसापास मारे गये हों, जिससे यह स्थान 'रक्तताल' या 'खून की तलाई' के नाम से प्रसिद्ध हो गया। स्थानीय अनुश्रुति के अनुसार युद्ध में मारे गये वीरों का अन्तिम संस्कार इसी स्थान पर किया गया था रक्तताल में चार छत्रियों और एक मज़ार बनी हुई है। उत्तर की ओर दो छत्रियाँ परस्पर संयुक्त है, ये ग्वालियर के राजा रामशाह तंवर (पूर्वी छत्री) और उसके ज्येष्ठ पुत्र शालिवाहन (पश्चिमी छत्री) की है। शलिवाहन की छत्री के एक स्तम्भ पर नौ पंक्तियों में मेवाड़ी भाषा में एक लेख खुदा हुआ है, जिससे ज्ञात होता है कि यह छत्री राणा कर्णसिंह ने वि.सं. 1682 में शालिवाहन के मृत्युस्थल पर बनवायी थी। इन छत्रियों के पीछे बस्ती है जो 'परमारों की भागल' के नाम से जानी जाती है। इससे आगे उत्तर में खेत पार करने पर बनास नदी का रेतीला तल है। कोई आश्चर्य नहीं कि युद्ध के समय सेनाओं की भगदड़ यहां तक रही हो, वैसे मुगलसेना का प्रारम्भिक भाग तो नदी पार करता हुआ पीछे भागा था। किन्तु राजस्थानी और फारसी इतिहासकारों में युद्ध स्थल के विषय में मतैव्य नहीं है बंदायूनी के वर्णन से तो कुछ भ्रमपूर्ण विचार प्रकट होते है।

मुहणोत नैणसी लिखता है "बनास तट पर खमणौर गांव के पास युद्ध हुआ है।"[8] 'राजप्रशस्ति' में खमनोर में युद्ध होने का उल्लेख मिलता है।[9] अबुलफजल ने इसे खमनोर का युद्ध लिख है वह लिखता है "दोनों सेनाएं खमनोर गांव के पास मिली, जो हल्दीघाटी के पास स्थित है और गोगुन्दा परगने में है।"[10]

बंदायूनी ने इसे 'गोगुन्दा का युद्ध' कहा है। वह लिखता है "जब मानसिंह और आसफ खाँ गोगुन्दा से 7 कोस पर दर्रे के पास शाही सेना सहित पहुँचे तो राणा लड़ने को आया।"[11]

परन्तु निजामुद्दीन अहमद बख्शी ने इसे 'हलदेव घाटी' का युद्ध बताया है।[12] बाद के इतिहास ग्रन्थों ओर बांकीदास की खयत में यह 'हल्दीघाटी' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। जेम्स टॉक[13], कविराजा श्यामदास[14], गौरीशंकर हीराचंद ओझा[15], डॉ. रघुवीर सिंह[16], डॉ. आर्शीवार्दीलाल श्रीवास्तव ने इसे 'हल्दीघाटी का युद्ध' ही कहा है।[17] टाड ने हल्दीघाट को 'हल्दीघाटी' की संज्ञा दी है।

डॉ. गोपीनाथ शर्मा ने लिखा है कि युद्ध के समय क्रमशः तीन स्थानों पर मुठभेड़े हुई

प्रथम मुठभेड, बादशाही बाग में हुई।

द्वितीय मुठभेड़, बादशाही बाग के उत्तर पूर्व की घाटी के बाहरी सिरे पर हुई।

तीसरी मुठभेड़ या मुख्य युद्ध 'रक्तताल' में मैदान में हुआ।[18]

इसी प्रकार अनेक आधुनिक इतिहास लेखक मानते है कि प्रथम लडाई घाटी के मुहाने के भीतरी भाग में स्थिति खुले मैदानी स्थल में हुई जिसे 'बादशाही बाग' कहा जाता है।[19] पूर्वोक्त कथन में डॉ. जी.एन. शर्मा ने भी इसे स्वीकारा, किन्तु यह मत स्वीकार[20] योग्य नहीं है कोई भी प्राचीन स्रोत इस बात की पुष्टि नहीं करता। दूसरे बादशाही भाग का यह खुला समतल भाग इतना छोटा है कि यह संभव नहीं कि उसमें दो सेनाओं के लगभग आठ हजार अश्वारोही हाथी और सैनिक आमने-सामने होकर लड़ सकें।[21] डॉ. आर्शीवादी लाल श्रीवास्तव ने इसके सम्बंध में बहुत स्पष्ट लिखा है "हल्दीघाटी दर्रे के भीतर केवल एक ही समतल भू-भाग है जो बादशाही बाग के नाम से जाना जाता है वहाँ दोनों सेनाओं के मध्य युद्ध होना संभव नहीं है। जैसा वर्णन बंदायुनी ने किया है, यह नितांत असंभव है। प्रत्यक्षदर्शी बंदायुनी ने स्पष्ट लिखा है कि मुगल सेना का बायां पार्श्व दर्रे के प्रवेश मार्ग (दर दहना-ए-घाटी)" के मुहाने पर नियुक्त था, जो खमणोर से दो मील दक्षिण पूर्व में है। अत एवं मुगल सेना का मध्यभाग ओर दक्षिणी पार्श्व उस स्थान से पूर्व की ओर आगे बनास नदी के पश्चिम की ओर फैला हुआ था। इस भांति स्पष्ट है कि लड़ाई हल्दीघाटी दर्रे के मुहाने के बाहर और दर्रे एवं खमणोर गांव के बीच के मैदानी भाग में हुई।[22]

युद्ध एक दृष्टि से

शाही सेना ने अजमेर से कूच कर मांडलगढ़ में दो माह तक पड़ाव डाले रखा प्रताप चाहते थे कि मांडलगढ़ पहुँच कर ही मानसिंह का सामना किया जाये लेकिन उनके सामन्तों ने सलाह दी कि क्योंकि मानसिंह शाही बल के साथ आया है अतः सामना पहाड़ों की ओट से किया जाना चाहिए। दूसरे मांडलगढ़ सीधे अजमेर के रास्ते में पड़ता था और वहाँ मुगलों की और भी ज्यादा सैनिक सहायता पहुँचने की अधिक संभावना थी. प्रताप ने यह सलाह मान ली।[23] युद्ध कहाँ किया जाये? इस पर विचार-विमार्श कर महाराणा ने लौहसिंह ग्राम में (वर्तमान में लोसिंग) में डेरा डाला यह पड़ाव चारों ओर से पहाड़ों से घिरा हुआ था ओर उसका बीच का मैदानी भाग पड़ाव के लिए पर्याप्त था वहाँ नाले तथा कुओं के पानी की भी सुविधा थी। इसी प्रकार उसका मुकाबला करने हेतु मुगल फौज भी बनास नदी के किनारे खमनोर के पास वाले गांव मोलेला में आ डटी। मुगल फौज का पडाव चौड़े मैदानी भाग एवम् पानी की अधिक सुविधा के विचार से डाला गया था। मुगल सेना के बचाव के लिए बनास नदी का कांटा चुनना एक युद्ध नीति का अंग था। राजपूत और मुगल

पड़ाव की लगभग दूरी 23 किलो मीटर थी। जिसके मध्य में संकरी 'हल्दीघाटी' मौजूद है।[24]

बंदायुनी के विवरण से जो प्रत्यक्षदर्शी होने के कारण अधिक विश्वसनीय प्रतीत होता है स्पष्ट है कि बादशाही बाग वाले स्थान में, घाटी चढ़कर आने के बाद, राणा ने अपनी सेना को व्यवस्थित किया हो, उसके दो विभाग कर एक विभाग को हकीमखाँ सूर के नेतृत्व में आगे भेजा हो और दूसरा विभाग स्वयं अपने साथ लेकर घाटी पार कर बाहर निकला हो। यही उसने सेना की व्यूह, रचना, आक्रमण की स्थिति और गुरिल्ला युद्ध नीति आदि के निर्देश दिये हो।[25]

सेना की संख्या को लेकर स्थानीय और फारसी ग्रन्थों में गहरा मतभेद है। नैणसी ने महाराणा की सेना की संख्या 9 से 10 हजार दी है और मुगल सेना 40,000 बताई है।[26] परन्तु बंदायुनी ने प्रताप की सेना संख्या 3000 व मुगलों की 5000 दी है, इसी को इतिहासकारों ने स्वीकार किया है।[27]

हल्दीघाटी का युद्ध लगभग तीन घण्टे में समाप्त हो गया, यह एक छोटा युद्ध था लेकिन वह दो शासन सत्ताओं, दो विरोधी विचारधाराओं और मान्यताओं के बीच संघर्ष का प्रतीक बन गया।

मेवाड़ के सैनिकों ने अपने तेज हमले और वीरतापूर्ण युद्ध कौशल द्वारा मुगल पक्ष की अग्रिम पंक्ति और बायें पार्श्व को छिन्न-भिन्न कर दिया था और मुगल सैनिक घबराकर दस मील दूर तक भाग गये थे। विजयश्री प्रताप को वरण करने वाली थी किन्तु विधि को यह मंजूर नहीं था और विजयश्री हाथ से निकल गई। प्रताप की सेना को मुगल पार्श्वों को छिन्न-भिन्न करने और उनको पीछे खदेड़ने में पूर्ण सफलता मिली, किन्तु अधिक जोश व उत्साह में मेवाड़ के सैनिक अपनी व्यूहरचना कायम नहीं रख सके ओर विजय निकट देखकर मध्य भाग मे एकत्र होकर लड़ने लगे, जहाँ मानसिंह हाथी पर सवार होकर युद्ध कर रहा था। इसके कारण अंतिम दौर में युद्ध का पासा पलटने पर वे बुरी तरह घिर गये और उनके लिये योजनाबद्ध व सुरक्षात्मक तरीके से वापस हल्दीघाटी के दर्रे में लौटना संभव नहीं रहा।[28]

हाथियों की लडाई में असफलता मिलने और रामप्रसाद जैसे विख्यात हाथी के साथ से निकल जाने से भी मेवाड़ की सेना दुष्प्रभावित हुई और जब मिहतर खाँ चंदावल से सुरक्षित सैन्य लेकर अकबर के आ पहुँचने का हल्ला करने हुए आगे बढ़ आया और भागते हुए मुगल सैनिक वापस लौट आये तो प्रताप की सेना पर चारों और से हमले होने लगे। किन्तु अब उसके लिये पुनर्व्यवस्थित होना संभव नहीं था उसके पास सुरक्षित सेना नहीं थी।[29]

अन्तिम दौर में राणा के प्रति निष्ठावान झाला सामन्त बीदा ने प्रताप के सर पर लगे राजकीय छत्र छीन लिया जिससे सभी ने उसे महाराणा समझ लिया जिससे प्रताप पर सैन्य दबाव कम हुआ और उनका विश्वस्त अनुयायी अपने घायल सरदार को अपनी सेना के पीछे के भाग से घाटी के उस पार सुरक्षापूर्वक ले गया।[30]

युद्ध हेतु हल्दीघाटी को चुनने के कारण

महाराणा प्रताप के अपने सैन्य संचालन के लिए हल्दीघाटी का मोर्चा प्राकृतिक सुरक्षा-स्थल की दृष्टि से बड़ा ही महत्वपूर्ण साबित हुआ क्योंकि यदि वे मैदान में आकर लड़ते तो उनकी सैन्य शक्ति का शत्रुओं को पता चल जाता, पर्वतों में चले जाने पर अकबर व उसके सेनापति मानसिंह को अन्त तक प्रताप के पास कितनी सेना है पता नहीं चल सका।

वास्तव में हल्दीघाटी एक प्रकार से मेवाड़ की सेना के लिए सुरक्षित पर्वतीय किवाड का काम करती थी या दूसरे शब्दों में हल्दीघाटी का पश्चिमी और दक्षिण पश्चिमी पर्वतीय क्षेत्र एक प्रकार से गहन सुरक्षा स्थल का काम करते रहे थे। दूसरे इस पर्वतीय क्षेत्र में रहने वाले भीलों को साथ जिन्हें प्रताप ने साथी माना प्रजा नहीं, आवश्यक था क्योंकि उसकी सेना में प्रशिक्षित राजपूत सैनिक इसे गिने थे अतः ऐसी स्थिति में भील जनजाति के ये अप्रशिक्षित लोग पत्थरो व तीरों से ही छिप कर लड़ते थे और अन्त तक प्राण देने को तत्पर रहे।[31]

हल्दीघाटी के युद्ध में लड़ने वाली मेवाड़ी सेना तो पर्वतीय धरातल और वातावरण से परिचित थी यह रहन-सहन, खान-पान, जलवायु सुरक्षा आदि सब दृष्टि से अभ्यस्त थी. परन्तु मुगल सेना पहाड़ों में भटक जाती, उसे भोजन उपलब्ध नहीं होता था जैसे ही अकबर ने सेना को बुलाया वे शीघ्र ही मेवाड़ की सीमा छोड़ कर चले गये।[32]

हल्दीघाटी में प्रताप का पहाड़ों में खिसक जाना मुगल सेनाओं के लिए बड़ी दुविधा और संकटपूर्ण समस्या बन गया। वे प्रताप की खोज में मेवाड़ के विभिन्न भागों पर अधिकार कर चौकियों बैठा आते लेकिन जैसे ही सेना आगे खिसकती और प्रताप के सैनिक दो ही चार दिनों में उन थानों और चौकियों पर नियुक्त मुगल सैनिकों को जाकर मार देते और उनके हथियार छीन लेते रसद लूट लेते परिणाम यह हुआ कि प्रताप की सेना ने एक ही माह में सारे मेवाड़ पर पुनः अपना कब्जा कर लिया।[33]

इस इतिहास प्रसिद्ध में विजय-पराजय के सवाल पर बराबर अनिर्णीत बहस चलती रही है। दोनों ही पक्ष अपनी-अपनी विजय का दावा करते रहे है लेकिन अन्त में हल्दीघाटी एक परिणाम विहीन युद्ध सिद्ध हुआ क्योंकि मानसिंह को भी पूर्ण विजयश्री प्राप्त नहीं हुई प्रताप भी मेवाड़ी सेना के 46% सैनिक खोज देने के बावजूद भी अपराजित रहकर सुरक्षित पहाड़ों में लौट गया, मानसिंह उसका पीछा न कर सका।

परिणाम व रणनीति में परिवर्तन

हल्दीघाटी युद्ध का बड़ा महत्वपूर्ण परिणम यह हुआ कि प्रताप हतोत्साहित नहीं हुआ उसने अपनी भावी रणनीति को निश्चित स्वरूप प्रदान किया इस युद्ध के बाद प्रताप ने मेवाड़ के सम्पूर्ण पर्वतीय इलाके की नाकेबंदी करा दी और गुरिल्ला युद्ध प्रणाली को योजनाबद्ध रूप से लागू लिया।[34]

हल्दीघाटी युद्ध ने मुगल शहंशाह अकबर की सेनाओं की अपराजयेता के भ्रम को ध्वस्त कर दिया। इससे विभिन्न प्रदेशों में दबी कुचली मुगल विरोधी शक्तियों को पुनः खड़ा होने का बल, साहस एवं प्रेरणा मिली। अकबर को अपनी राजनैतिक, कुटनीतिक एवं सैनिक नीतियों में कई परिवर्तन करने पड़े। प्रताप के इस अदभ्य संघर्ष के कारण भारत के राजपूत एवं अन्य सैनिक शक्तियों में पुनः नई शक्ति एवं आशा का संचार हुआ। यह स्पष्ट कहा जा सकता है कि यदि हल्दीघाटी युद्ध में मेवाड पराजित हो जाता और प्रताप व उसके सहयोगियों की शक्ति समाप्त हो जाती तो सम्भवतः भारत के आगामी इतिहास का स्वरूप् ही दूसरा होता इस दृष्टि से हल्दीघाटी युद्ध भारत के निर्णायक युद्धों में माना जा सकता है। [35]

कतिपय विचारक हल्दीघाटी युद्ध को हिन्दू और मुसलमान सम्प्रदायों के बीच का युद्ध सिद्ध कर प्रताप को इस्लाम के विरूद्ध लड़ने वाला 'हिन्दूयोद्धा' के रूप में प्रस्तुत करते है लेकिन वास्तव में प्रताप का यह युद्ध दासता व निरंककुशता के विरूद्ध था, जिसमें हकीम खाँ भी उसके साथ था।[36]

इसके अतिरिक्त अकबर ने साम्राज्य विरोधी देश की प्रमुख शक्तियाँ युद्ध में मौजूद थी। ग्वालियर का राजा रामशाह तंवर व गुजरात से सटे राज्य थे जिन पर अकबर के अधिकार कर लिया था।

राणा प्रताप ने इस युद्ध में जो रण चातुर्य की नीति अपनाई उसके ठीक 81 वर्ष बाद जोधपुर के महाराजा जसवंतसिंह ने भी वही नीति अपनाई इस प्रकार हल्दीघाटी की लड़ाई स्थानीय नरेशों के लिए प्रेरणा पुंज बन गई और हल्दीघाटी का यह युद्ध स्थल स्वतंत्रता की बलिवेदी पर प्राण न्यौछावर करने वाले वीरों के रक्त से सींचा जारक स्वाधीनता प्रेमियों के लिए एक तीर्थ स्थान बन गया।[37]

चेतक चबूतरा

जब प्रताप अपने घायल सैनिकों को बचाने और भीलों की नाकाबंदी व्यवस्था हेतु युद्ध स्थल से निकलें एक नाला लांघने के प्रयास में उनका स्वामिभक्त घोड़ा गिर पड़ा ओर प्राण पखेरू उड़ गए। वहीं हल्दीघाटी में ही प्रताप ने चेतक का अश्रुपूरित अंतिम संस्कार किया जहां आज चेतक चबूतरा बना है।[38]

हल्दी घाटी का युद्ध वास्तव में निर्णायक युद्ध था जिसमें मेवाड़ की स्वतंत्रता को बनाये रखने में यहां का धरातल, जलवायु, ओर जनजातियों का बहुत बड़ा योगदान रहा। किसी भी युद्ध और युद्ध स्थल मे विजय बिना भौगोलिक ज्ञान रखे नहीं हो सकती। प्रताप ने बड़ी ही कुशलता से अरावली पर्वतों को अपना सुरक्षा स्थल बनाया और हल्दीघाटी को ही युद्ध भूमि बनाया वे मेवाड़ के पर्वतीय धरातल का सामरिक महत्व जानते थे और ऐसे धरातल में छापामार युद्ध ही सबसे बड़ी कला है। उन्हें मालूम था कि मुगल सेना जो पर्वतीय क्षेत्रों में लड़ने में अभ्यस्त न होने से उन पर विजय प्राप्त नहीं कर सकती थी।[39]

इतिहास साक्ष्यों पर जीता है न कि कल्पनाओं पर। ऐतिहासिक स्थल मूक साक्षी है। यदि उनके तत्कालीन स्वरूप का शोधपूर्ण अध्ययन किया जाए तभी तत्यातथ्य निर्णय तक पहुँचा जा सकता है। हल्दीघाटी कोई पर्यटन स्थल नहीं वरन् वह एक पवित्र वेदी है, ऐतिहासिक स्थल है, जहाँ राजस्थान के सपूतों ने अपने बलिदान द्वारा समता, समानता एकता और राष्ट्रीयता का शंखनाद किया था यदि इन एकतावादी सपूतों की स्मृति जीवित रखना है तो इन ऐतिहासिक स्थलों के स्वरूपों को यथावत रखा जाए।[40]

हल्दीघाटी का यह ऐतिहासिक स्थल स्वतंत्रता संग्राम के अनुष्ठान के एक ऐसे दीपक के समान है जिसमें स्वतंत्रता सेनानियों ने अपने रक्तरूपी तेल से प्रतापकीर्ति की अखण्ड ज्योति प्रज्वलित की, जिसकी प्रकाशवान किरणें स्वाधीनता के लिए संघर्ष करने ओर स्वतंत्र रहने की प्रेरणा मानव जाति को अनन्त काल तक देती रहेगी।[41]

प्रताप में जन-साधारण की अटल आस्था ही प्रताप की सबसे प्रबल स्थायी शक्ति प्रमाणित हुई। पराजित तथा निरन्तर खदेड़े जाने पर भी क्षेत्रीय जनता ने उनका साथ कभी नहीं छोडा।

स्वयं बंदायुनी ने लिखा है कि जब वह मानसिंह की आज्ञा से रामप्रसाद हाथी को लेकर मुगल दरबार लौट रहा था, तो मार्ग में उसकी इस बात पर लोगों ने विश्वास नहीं किया कि राणा प्रताप की हार हो गई।[42]

निष्कर्ष

वास्तव में इस युद्ध में सब बातों की पहल प्रताप ने अपने पास रखी। उसने मुगलों को अपने ही चुने हुए स्थान, समय व तरीके से लड़ने को बाध्य किया। आक्रमण का आरम्भ भी उसने ही किया। तथा मैदान से पहाड़ों की ओर युद्ध को स्थनान्तरित करने का प्रयास भी उसी ने किया। प्रताप की दृष्टि से हल्दीघाटी के युद्ध का इतना महत्व है कि अपने जीवन की मुगलों से हुई पहली टक्कर में उसने ऐसा मुकाबला किया कि एक तो उसे बहुत बड़ी ओर अच्छी तरह सजी सेना के छक्के छूट गये, और यह सेना उसे न पकड़ सकी, न सदा के लिए सुला सकी। हल्दीघाटी के कारण न प्रताप का उत्साह कम

हुआ. न सम्मान। नया संकल्प और नया सहयोग इसके परिणामस्वरूप उसने प्राप्त किया। प्रताप ने बहुसंख्यक श्रेष्ठ शत्रु पर सामने से आक्रमण करने की गलती फिर नहीं दोहराई। अब से उसने छापामार युद्ध प्रणाली अपनायी। इस प्रकार का युद्ध प्रदेश की प्राकृतिक दशाओं एवं स्थानीय लोगों ओर विशेषकर भीलों के लिए विशेष अनुकूल था। इस प्रकार हल्दीघाटी के सबकों के फलस्वरूप प्रताप और अकबर के बीच युद्ध का रूप ही बदल गया।

सन्दर्भ सूची

1. भाटी, हुकुमसिंह (सं.), महाराणा प्रताप ऐतिहासिक अध्ययन, पृष्ठ 37
2. लीवाल, देवीलाल, महाराणा प्रताप महान, पृष्ठ 31
3. लीवाल, देवीलाल (सं.), हल्दीघाटी युद्ध, उदयपुर, 1980, लेख भटनागर राजेन्द्र प्रकाश, पृष्ठ 14
4. लीवाल, देवीलाल, महाराणा प्रताप महान, पृष्ठ 31
5. लीवाल, देवीलाल, महाराणा प्रताप महान, पृष्ठ 17
6. लीवाल, देवीलाल, महाराणा प्रताप महान, पृष्ठ 32
7. लीवाल, देवीलाल, महाराणा प्रताप महान, पृष्ठ 18. 19
8. गड, रामनारायण (अनु.), मुहणोत नैणसी की ख्यात, काशी (भाग-1), पृष्ठ 61, 1915
9. ज प्रशस्ति सर्ग 4, उदयपुर श्लोक 22-23, 1960
10. अकबरनामा, आगरा, नवीन संस्करण (भाग-3), पृष्ठ 245
11. पालीवाल, देवीलाल, महाराणा प्रताप महान, पृष्ठ 13
12. उपर्युक्त
13. टॉड, कर्नल जेम्स (सं.), एनल्य एण्ड एन्टीक्वीटीज ऑफ राजस्थान, कलकत्ता, पृष्ठ 393, 1925
14. श्यामलादास, वीर विनोद, उक्सुक (भाग-1), पृष्ठ 15
15. ओझा, गौ.ही. (सं.), उदयपुर राज्य का इतिहास, अजमेर, जिल्द-2, पृष्ठ 744, 1931
16. सिंह, रघुवीर, महाराणा प्रताप, दिल्ली, पृष्ठ.26, 1984
17. श्रीवास्तव, आर्शीवादीलाल, अकबर महान, दिल्ली (भाग-1), पृष्ठ 202, 1970
18. शर्मा, गोपीनाथ (सं.). मेवाड़ एण्ड मुगल सम्परर्स, पटना, द्वितीय संस्करण, पृष्ठ 83. 1962
19. पालीवाल, देवीलाल, हल्दीयुद्ध, पृष्ठ 13
20. शर्मा, गोपीनाथ, मेवाड एण्ड मुगल एम्परर्स, पृष्ठ 86
21. पालीवाल, देवीलाल, महाराणा प्रताप महान, पृष्ठ 32
22. उपर्युक्त
23. भाटी, हुकुमसिंह (सं.) मन्झमिका, युग पुरूष महाराणा प्रताप महान, उदयपुर, पृष्ठ.35
24. भाटी, मन्झमिका पूर्वाक्त, लेख शर्मा गोपीनाथ, पृष्ठ 46-47
25. पालीवाल, देवीलाल, हल्दीयुद्ध, पृष्ठ 18
26. भाटी, हुकुमसिंह (सं.) मन्झमिका, युग पुरुष महाराणा प्रताप महान, उदयपुर, पृष्ठ 36
27. उपर्युक्त
28. पालीवाल, देवीलाल, महाराणा प्रताप महान, पृष्ठ 42
29. उपर्युक्त
30. पालीवाल, देवीलाल, हल्दी युद्ध, लेख सरकार, जदुनाथ, पृष्ठ 10
31. दशोरा, जमनालाल, लेखः हल्दीघाटी युद्ध की भौगोलिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 57
    हल्दी घाटी का युद्ध, चतुर्थ शताब्दी समारोह, 1976, स्मारिका, महाराणा प्रताप स्मारक समिति, उदयपुर
32. दशोरा, जमनालाल पूर्वोक्त लेख, पृष्ठ 58
33. उपर्युक्त
34. पालीवाल, देवीलाल, महाराणा प्रताप महान, पृष्ठ 44
35. पालीवाल, देवीलाल, हल्दीयुद्ध, पृष्ठ 2, 3
36. पालीवाल, देवीलाल, महाराणा प्रताप महान, पृष्ठ 45
37. भाटी, हुकुमसिंह, महाराणा प्रताप ऐतिहासिक अध्ययन, पृष्ठ 44
38. भाटी, हुकुमसिंह, मन्झमिका, पूर्वोक्त लेख, शर्मा गोपीनाथ, पृष्ठ 49
39. दशोरा, जमनालाल, लेखः हल्दीघाटी युद्ध की भौगोलिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ 59
40. भाटी, हुकुमसिंह, मन्झमिका, पृष्ठ 50
41. भाटी, हुकुमसिंह, महाराणा प्रताप ऐतिहासिक अध्ययन, पृष्ठ 44
42. पलीवाल, देवीलाल, हल्दी युद्ध, लेख सिंह, रघुवीर, पृष्ठ 13